निर्मला योग

द्विमासिक | वर्ष २ अंक १० | नवम्बर-दिसम्बर 1983

ॐ त्वमेव साक्षात्, श्री कल्की साक्षात्, श्री सहस्रार स्वामिनी,
मोक्ष प्रदायिनी, माता जी, श्री निर्मला देवी नमो नमः ॥

परम वन्दनीय माताजी श्री निर्मला देवी जी के संयुक्त राज्य अमेरिका की यात्रा (१९८१) के सम्बन्ध में डा० वारेन के संक्षिप्त पत्र का हिन्दी रूपान्तर

अन्तोगत्वा स्नेह युक्त माताजी संयुक्त राज्य अमेरिक के दौरे पर मानव कल्याणार्थ विमानारूढ़ हुईं। विमान यात्रा में माता जी के सान्निध्य में जो प्रेरणा प्राप्त हुई वही कुछ शब्दों में आपके सम्मुख प्रस्तुत है—

भविष्य के गर्भ में जो कुछ भी छिपा है वह अधिकतर वहाँ के निवासी भक्त मण्डली की आध्यात्मिक क्षुधा एवं जिज्ञासा पर निर्भर करता है कि वे कहाँ तक अपने आपको इस योग्य प्रदर्शित करते हैं। एक ओर तो माता जी का कथन है कि वे अपने अवतरण की अमेरिका में सार्वजनिक रूप से घोषणा करेंगी। दूसरी ओर उनको इस बात की भी चिन्ता है कि (सम्भव है) बहुत-से इस अवसर को चूक जायेंगे क्योंकि वहाँ के निवासी अहंकार ग्रस्त हैं और उनके मन पर अशुद्ध ज्ञान एवं पाखण्डी गुरुओं का प्रभाव काफ़ी जमा हुआ है। अमेरिका विश्व भर का विशुद्धि चक्र है और यहीं से अहंकार का आरम्भ माना जाता है। हमें प्रार्थना करनी चाहिये कि यह अशुद्ध ज्ञान निर्मला विद्या में परिवर्तित हो जाये और अहं (ego) स्वयं इस तथ्य को स्वीकार करे कि अब तक का अर्जित समस्त ज्ञान उपयोगी नहीं हैं। वास्तव में यह ज्ञान आत्म साक्षात्कार के मार्ग को सीमित करता है अतः गत्यवरोध की सम्भावना प्रबल हो जाती है।

परन्तु माता जी की प्रबल इच्छा है कि इस यात्रा में अधिकाधिक पार हों। उनका अनन्त स्नेह एवं कृपा यथा पूर्व से भी अधिक मात्रा में उमड़ पड़ रहा है। अभी थोड़े दिन व्यतीत हुये कि ब्रिटेन में कुछ बातों से (शरीरस्थ) देवतागण इतने अधिक कुपित हुये कि वन्दनीय माताजी के चक्र इतने सक्रिय हो गये कि उनसे (कोप को) सहन करना दुष्कर हो गया। जब मानव समुदाय अपने स्वयं को अथवा अन्य दूसरे व्यक्तियों को हानि पहुँचाने का दुरतिक्रम करते हैं अथवा अपनी सामर्थ्य की परिधि के बाहर कार्य करने की चेष्टा ही नहीं वरन् दुःसाहस भी करते हैं तो देवतागण लोगों से परावृत हो जाते हैं। मैंने स्वयं ब्रिटेन में बहुत-से ऐसे विभिन्न उदाहरण देखे हैं कि जब मानव अपनी आत्मा के अथवा ईश्वर के विरुद्ध कार्य करते हैं। यह कुछ अच्छी बात प्रतीत नहीं होती है। माता जी का कथन है कि ऐसी ही तत्सम घटनाएं आस्ट्रेलिया में भी (अन्य देशों की तरह) घटित हुई हैं। ऐसे समुदाय एवं वर्ग विशेष को यथा सम्मत हल्की-सी चेतावनी भी दी गई थी, सावधान भी कराया जा चुका है कि पुनरावृत्ति न हो।

जब परम वरेण्यम माता जी का शुभागमन अमेरिका में होगा तो विश्व भर के पार व्यक्ति (realised souls) की सामूहिक प्रकृति एवं प्रवृत्ति का विकास होगा और सुदृढ़ रहेगा। वे सब जो इस तथ्य को स्वीकार नहीं करेंगे और अपने पुराने स्वार्थी, व्यक्तिगत (कुत्सित) विचारों, कार्यकलाप एवं बोधता (feelings) में निमग्न रहेंगे वे आध्यात्मिकता के स्तर से गिर जायेंगे। सामूहिक प्रकृति (collective being) के साथ विकास का अलभ्य पारितोषिक आत्म साक्षात्कार की स्थिरता के रूप में प्राप्त होना निश्चय है। सबके सब अधिका-

(शेष कवर पृष्ठ ३ पर)

सम्पादकीय

कृष्णेन संस्तुते देवी शश्वभ्दक्त्या सदाम्बिके ।
रूपं देहि जयंदेहि यशोदेहि द्विषो जहि ॥

श्री दुर्गासप्तशती

"देवि अम्बिके ! भगवान् विष्णु नित्य निरन्तर भक्तिपूर्वक तुम्हारी स्तुति करते रहते हैं। तुम रूप दो, जय दो, यश दो, काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो" ।

आज हम साक्षात् परब्रह्म परमेश्वरी श्री माता जी से प्रार्थना करते हैं कि हमें वह शक्ति दें कि हम उनके दर्शाए मार्ग पर समस्त विश्व को लाने में सक्षम हो सकें ।

निर्मला योग

४३, बंगलो रोड, दिल्ली-११०००७

संस्थापक : परम पूज्य माता जी श्री निर्मला देवी

सम्पादक मण्डल : डॉ शिव कुमार माथुर
श्री आनन्द स्वरूप मिश्र
श्री आर. डी. कुलकर्णी

प्रतिनिधि कनाडा : लोरी टोडरिक
४५४८ वुडग्रीन ड्राइव
वैस्ट वैन्कूवर,
बी.सी. बी. ७ एस. २ वी १

यू.एस.ए. श्रीमती क्रिस्टाइन पैट्रूनीया
२२५, अदम्स स्ट्रीट, १/ई
ब्रुकलिन, न्यूयार्क-११२०१

भारत श्री एम० बी० रत्नान्नवर
१३, मेरवान मैन्सन
गंजवाला लेन, बोरीवली
(पश्चिमी) बम्बई-४०००९२
श्री राजाराम शंकर रजवाड़े
८४०, सदाशिव पेठ, पुणे-४११०३०

यू.के. श्री गेविन ब्राउन
ब्राउन्स जियोलॉजिकल इन्फ़र्मेशन
सर्विसेज़ लि.,
१६० नार्थ गावर स्ट्रीट
लन्दन एन.डब्लू. १२ एन.डी.

इस अंक में . . . . . **पृष्ठ**

१. सम्पादकीय ... १
२. प्रतिनिधि ... २
३. परमपूज्य माताजी का प्रवचन ... ३
४. परमपूज्य माताजी का सार्वजनिक भाषण ... ११
५. परम वन्दनीय माताजी के संयुक्त राज्य अमेरिका की यात्रा (१९८१) के सम्बन्ध में डॉ० वारेन के संक्षिप्त पत्र का हिन्दी रूपान्तर द्वितीय कवर
६. सहजयोगी की चाह ... चतुर्थ कवर
७. सन् १९८४ में माताजी का दिल्ली में कार्यक्रम ... चतुर्थ कवर

卐 श्री गणेशाय नमः 卐

परमपूज्य श्री माताजी का प्रवचन

सहस्रार दिवस, ५ मई १९८३
गोरई क्रीक, बम्बई

आप सबकी ओर से मैं बम्बई के सहजयोगी व्यवस्थापक जिन्होंने यह इन्तजामात किये हैं, उनके लिये धन्यवाद देती हूँ, और मेरी तरफ़ से भी मैं अनेक धन्यवाद देती हूँ। उन्होंने बहुत सुन्दर जगह हम लोगों के लिये ढूंढ रखी है। ये भी एक परमात्मा की देन है कि इस वक़्त जिस चीज़ के बारे में बोलने वाली थी, उन्हीं पेड़ों के नीचे बैठकर सहस्रार की बात हो रही है।

चौदह वर्ष पूर्व कहना चाहिये या जिसे तेरह वर्ष हो गए और अब चौदहवाँ वर्ष चल पड़ा है, यह महान् कार्य संसार में हुआ था, जबकि सहस्रार खोला गया। इसके बारे में मैंने अनेक बार आपसे हर सहस्रार दिन पर बताया हुआ है कि क्या हुआ था, किस तरह से ये घटना हुई, क्यों की गई और इसका महात्म्य क्या है।

लेकिन चौदहवाँ जन्म दिन एक बहुत बड़ी चीज है। क्योंकि मनुष्य चौदह स्तर पर रहता है, और जिस दिन चौदह स्तर वो लाँघ जाता है, तो वो फिर पूरी तरह से सहजयोगी हो जाता है। इसलिये आज सहजयोग भी सहजयोगी हो गया।

अपने अन्दर इस प्रकार परमात्मा ने चौदह स्तर बनाए हैं। अगर आप गिनिये, सीधे तरीके से, तो भी अपने अन्दर आप जानते हैं सात चक्र हैं, एक साथ अपने आप। उसके अलावा और दो चक्र जो हैं, उसके बारे में आप लोग बातचीत ज्यादा नहीं करते, वो हैं 'चन्द्र' का चक्र और 'सूर्य' का चक्र। फिर एक हम्सा चक्र है, इस प्रकार तीन चक्र और आ गए। तो, सात और तीन–दस। उसके ऊपर और चार चक्र हैं। सहस्रार से ऊपर और चार चक्र हैं। और उन चक्रों के बारे में भी मैंने आप से बताया था–अर्ध-बिन्दु, बिन्दु, वलय और प्रदक्षिणा ऐसे चार चक्र हैं। सहजयोग के बाद भी, जब कि सहस्रार खुल गया है, उस पर भी ये चार चक्रों में आपको जाना है—अर्धबिन्दु, बिन्दु, वलय और प्रदक्षिणा। इन चार चक्रों के बाद कह सकते हैं कि हम लोग सहजयोगी हो गए।

और दूसरी तरह से भी आप देखें, तो हमारे अन्दर चौदह स्थितियाँ, सहस्रार तक पहुँचने पर भी हैं। अगर उसको विभाजित किया जाए तो सात चक्र अगर इड़ा नाड़ी पर और सात पिंगला नाड़ी पर हैं।

मनुष्य जब चढ़ता है, तो वो सीधे नहीं चढ़ता। वो पहले left (बायें) में आता है, फिर right (दायें) में जाता है, फिर left में आता है, फिर right है जाता है। और कुण्डलिनी जो है, वो भी जब चढ़ती है तो इन दोनों में विभाजित होती हुई

चढ़ती है। इसकी वजह ये है कि मैं आपको अगर समझाऊँ कि दो रस्सी और दोनों रस्सियाँ इस प्रकार नीचे उतरते वक़्त या ऊपर चढ़ते वक़्त भी दो अवगुण्ठन लेती हैं। जब दो अवगुण्ठन लेती हैं, तो उसके left और right इस प्रकार से पहले left और फिर right, दोनों के अवगुण्ठन होने से, फिर right वाली right को आ जाती है, left वाली left को चली जाती है।

आप अगर इसको देखें, तो मैं आपको दिखा सकती हूँ। समझ लीजिये इस तरह से आया। अब इसने एक चक्कर लिया, और दूसरे चक्कर लेने में फिर आ गई इसी तरफ़। इस तरफ़ से आया, इस ने एक चक्कर लिया, फिर दूसरा चक्कर लिया, फिर इस तरफ़। इस प्रकार दो अवगुण्ठन उसमें होते जाते हैं। इसलिये आपकी जब कुण्डलिनी चढ़ती है, तो चक्र पर आपको दिखाई देता है, कि left पकड़ा है या right, क्योंकि कुण्डलिनी तो एक है। फिर आपको एक ही चक्र पर दोनों चीज दिखाई देती हैं। इस प्रकार आप देखें कि left पकड़ा है या right पकड़ा है।

तो इस प्रकार हमारे अन्दर left और right, अगर दोनों का विभाजन किया जाए, एक चक्र का, तो सात दूनी चौदह। वैसे ही हमारे अन्दर चौदह स्थितियाँ तो पहले ही cross (पार) करनी पड़ती हैं, जब आप सहस्रार तक पहुँचते हैं। और अगर इसको आप समझ लें कि सात ये, और ऊपर के सात—इस तरह भी तो चौदह का एक मार्ग बना।

इसलिये, 'चौदह' चीज़ जो हैं वो कुण्डलिनी शास्त्र में बहुत महत्त्वपूर्ण, बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। बहुत महत्त्वपूर्ण चीज़ है। और जब तक हम इस चीज़ को पूरी तरह से न समझ लें, कि इन चौदह चीजों से जब हम परे उठेंगे, तभी हम सहजयोग के पूरी तरह से अधिकारी हैं। हमको आगे बढ़ते ही रहना चाहिए और उसमें पूरी तरह से रजते रहना पड़ेगा। राजना, विराजना—ये शब्द आपके सामने पहले भी मैंने बहुत कहे हैं लेकिन आज के दिन विशेषकर के, हम लोगों को समझना चाहिए कि सहस्रार के दिन राजना क्या है, विराजना क्या है।

अब आप यहाँ बैठे हैं, ये पेड़ों को आप देखिये। ये पेड़ श्रीफल का है। नारियल को 'श्रीफल' कहा जाता है। नारियल को श्रीफल कहा जाता है। श्री फल, जो नारियल है, इसके बारे में आपने कभी सोचा या नहीं, पता नहीं। लेकिन बड़े सोचने की चीज है—'इसे श्रीफल क्यों कहते हैं?'

ये समुद्र के किनारे होता है, और कहीं होता नहीं। सबसे अच्छा जो ये फल होता है, समुद्र के किनारे। वजह ये है कि समुद्र जो है, ये 'धर्म' है। जहाँ धर्म होगा, वहीं श्रीफल फलता है। जहाँ धर्म नहीं होगा, वहाँ श्रीफल नहीं होगा। लेकिन समुद्र के अन्दर 'सभी' चीज़ें बसी रहती हैं। हर तरह की सफ़ाई, गन्दगी, हर चीज इसमें होती है। ये पानी भी 'नमक' से भरा होता है। इसमें नमक होता है। ईसा मसीह ने कहा था कि 'तुम संसार के नमक हो।' माने हर चीज में आप घुस सकते हो, 'हर चीज' में आप स्वाद दे सकते हो। 'नमक हो'—नमक के बग़ैर इन्सान जी नहीं सकता। जो हम ये प्राण-शक्ति अन्दर लेते हैं, अगर हमारे अन्दर नमक न हो तो वो प्राण-शक्ति भी कुछ कार्य नहीं कर सकती। ये catalyst (कार्य-साधक) है। और ये नमक जो है, ये हमें जीने का, संसार में रहने का, प्रपञ्च में रहने की पूर्ण व्यवस्था नमक करता है। अगर मनुष्य में नमक न हो, तो वो किसी काम का इन्सान नहीं। लेकिन परमात्मा की तरफ़ जब ये चीज उठती है, तो वो सब नमक को नीचे ही छोड़ देती है—'सब' चीज छूट जाती हैं। और जब इन पेड़ों पर सूर्य की रोशनी पड़ती है, और सूर्य की रोशनी पड़ने पर जब इसके पत्तों का रस और सारे पेड़ का रस, ऊपर की ओर खिंच आता है—क्योंकि evapora-

tion होता (भाप बनता) है; तब इसमें से जो, इस तना में से जो यही पानी ऊपर बहता है—वो 'सब' कुछ छोड़कर के, उन चौदह चीजों को लाँघ करके, ऊपर जाकर के, श्रीफल बनता है।

वही श्रीफल आप हैं। और देवी को श्रीफल जरूर देना होता है। श्रीफल दिये बगैर पूजा सम्पन्न नहीं होती। श्रीफल भी एक अजीब तरह से बना हुआ है। दुनिया में ऐसा कोई सा भी फल नहीं, जैसे श्रीफल है। उसका कोई-सा भी हिस्सा बेकार नहीं जाता। इसका एक-एक हिस्सा इस्तेमाल होता है। इसके पत्तों से लेकर हर चीज इस्तेमाल होती है और श्रीफल का भी — हरएक चीज इस्तेमाल होती है।

आप देखें कि श्रीफल भी मनुष्य के सहस्रार जैसा है। जैसे बाल अपने हैं, इस तरह से श्रीफल के भी बाल हैं। 'यही श्रीफल है।' इसमें बाल होते हैं ऊपर में, इसके protection (रक्षा) के लिये। मृत्यु से protection हमें बालों से मिलता है। इस लिये बालों का बड़ा महान् मान किया गया है—बाल बहुत महान् हैं, और बड़ी शक्तिशाली चीज हैं क्योंकि आपको protect करते हैं। इनसे आपकी रक्षा होती है। और इसके अन्दर जो हमारे जो cranial bones हैं, जो हड्डियाँ हैं, वो भी आप देखते हैं कि श्रीफल के अन्दर में बहुत कड़ा-सा इस तरह का एक ऊपर से आवरण होता है। उसके बाद हमारे अन्दर grey matter और white matter ऐसी दो चीजें हमारे अन्दर होती हैं। श्रीफल में भी आप देखें—white matter और grey matter.....और उसके अन्दर पानी होता है, जो हमारे में cerebrospinal fluid होता है। उसके अन्दर भी पानी होता है—वो limbic area होता है।

तो ये साक्षात् श्रीफल जो है, ये ही हमारा—अगर इनके लिये ये फल है, तो हमारे लिये ये फल है। जो हमारा brain (मस्तिष्क) है, ये हमारी सारी उत्क्रान्ति का फल है। आज तक जितना हमारा evolution (उत्क्रान्ति) हुआ है—जो amoeba (एक कोशिकीय जन्तु) से आज हम इन्सान बने हैं, वो सब हमने इस brain के फल स्वरूप पाया है। ये जो brain है, ये सब कुछ—जो कुछ हमने पाया है इस brain से। इसी में सब तरह की शक्तियाँ, सब तरह का इसी में सब पाया हुआ धन सञ्चित है।

अब इस हृदय के अन्दर जो आत्मा विराजती है, और उसका जो प्रकाश हमारे अन्दर सहजयोग के बाद सात परतों में फैलता है, दोनों तरफ़ से वो तभी हो सकता है, जब आदमी का सहस्रार खुला हो। अभी तक हम इस दिमाग से वो ही काम करते हैं। आत्म-साक्षात्कार से पहले, सिवाय इसके कि हम अहङ्कार और super-ego (प्रति-अहंकार) इन दोनों के माध्यम से जो कार्य करना है, वो करते हैं। अहङ्कार और प्रतिअहङ्कार, या आप कहिये 'मन' और 'अहङ्कार'—इन दोनों के सहारे हम सारे कार्य करते हैं। लेकिन realization (साक्षात्कार) के बाद हम आत्मा के सहारे कार्य करते हैं। आत्मा, realization से पहले, हृदय में ही विराजमान है, बिल्कुल अलग—'क्षेत्रज्ञ' बना हुआ, देखते रहने वाला। उसका काम, वो जैसा भी है, देखने का मात्र—वो करता रहता है। लेकिन उसका प्रकाश हमारे चित्त में नहीं है, वो हमसे अलग है, वो हमारे चित्त में नहीं है।

Realization के बाद तो हमारे चित्त में आ जाता है, पहले। पहले चित्त में आता है। और चित्त आप जानते हैं कि void (भवसागर) में बसा है। उसके बाद उसका प्रकाश सत्य में आ जाता है, क्योंकि हमारा जो मस्तिष्क है, उसमें प्रकाश आ जाने से हम सत्य को जानते हैं। जानते—माने ये नहीं कि बुद्धि से जानते हैं, पर साक्षात् में जानते हैं कि ये है 'सत्य'। उसके बाद उसका प्रकाश हृदय

में दिखाई देता है। हृदय प्रगाढ़-हृदय बढ़ने लग जाता है, 'विशाल' होने लगता है, उसकी आनन्द की शक्ति बढ़ने लगती है। इसलिये 'सच्चिदानन्द'– सत्, चित्त और आनन्द—सत् मस्तिक में, चित् हमारे धर्म में और आनन्द हमारी आत्मा में—प्रकाशित होने लगता है। उसका प्रकाश पहले धीरे-धीरे फैलता है, ये आप सब जानते हैं। उसका प्रकाश धीरे-धीरे बढ़ता है, सूक्ष्म चीज होती है, पहले बहुत सूक्ष्म क्योंकि हम जिस स्थूल व्यवस्था में रहते हैं, उस व्यवस्था में उस सूक्ष्म को पकड़ना कठिन हो जाता है। धीरे-धीरे वो पकड़ आ जाती है। उसके बाद आप बढ़ने लग जाते हैं, अग्रसर होते हैं। सहस्रार का एक पर्दा खुलने से ही कुण्डलिनी ऊपर आ जाती है लेकिन उसका प्रकाश चारों तरफ़ जब तक नहीं फैलेगा। 'सिर्फ़' ऊपर कुण्डलिनी आ जाने से आप ने सदाशिव के पीठ को नमस्कार कर दिया। आप के अन्दर की आत्मा का प्रकाश धुंधला-धुंधला बहने लगा, लेकिन अभी इस मस्तिष्क में वो पूरा खिला नहीं।

अब आश्चर्य की बात है कि आप अगर मस्तिष्क से इसको फैलाना चाहें तो नहीं फैला सकते। अपना मस्तिष्क और अपना हृदय—इसका अब बड़ा सन्तुलन दिखाना होगा। आपको तो पता ही है, कि जब आप अपने बुद्धि से बहुत ज्यादा काम करते हैं, तो heart-failure (हृदय-गति रुकना) हो जाता है। और जब आप heart (हृदय) से बहुत ज्यादा काम करते हैं, तो आपका brain (मस्तिष्क) फेल हो जाता है। इनका एक सम्बन्ध बना ही हुआ है, पहले से बना हुआ है। बहुत गहन सम्बन्ध है। और उस गहन सम्बन्ध की वजह से, जिस वक़्त आप पार हो जाते हैं, इसका सम्बन्ध और भी गहन होना पड़ता है। हृदय और इस brain (मस्तिष्क) का सम्बन्ध बहुत ही घना होना चाहिये। जिस वक़्त ये पूरा integrate (एक) हो जाता है, तब चित्त आपका जो है, पूर्णतया परमेश्वर-स्वरूप हो जाता है।

ऐसा ही कहा जाता है हठ योग में भी कि 'मन' और 'अहङ्कार' दोनों का लय हो जाता है।' लेकिन ऐसे बात करने से तो किसी की समझ ही में नहीं आयेगा, 'इसका लय कैसे होगा?' मन और अहङ्कार का। तो, वो मन के पीछे लगे रहते हैं, अहङ्कार के पीछे लगे रहते हैं अहङ्कार को मारते रहो, तो मन बढ़ जाता है; मन को मारते रहो तो अहङ्कार बढ़ जाता है। उनके समझ ही में नहीं आता, कि ये पागलपन क्या है। ये किस तरह से जाए? मन और अहंकार को किस तरह से जीता जाए?

उसका एक ही द्वार है—'आज्ञा-चक्र'। आज्ञा-चक्र पर काम करने से मन और अहङ्कार जो हैं, उसका पूरी तरह से लय हो जाता है। और वो लय होते ही हृदय और ये जो brain है, इनमें पूरा 'सामञ्जस्य' पहले आ जाता है—concord। लेकिन एकता नहीं आती। 'इस एकता को ही, हम को पाना है।' तो आपका जो हृदय है, वही सहस्रार हो जाता है, और आपका जो सहस्रार है, वही हृदय। जो आप सोचते हैं, वही आपके हृदय में है, और जो कुछ आपके हृदय में है, वही आप सोचते हैं। ऐसी जब गति हो जाए तो कोई भी तरह की आशङ्का, कोई भी तरह का अविश्वास, किसी भी तरह का भय, कोई-सी भी चीज़ नहीं रहती।

जैसे आदमी को भय लगता है, तो उसे क्या करते हैं? उसे brain से सिखाते हैं, देखो भाई, भय करने की कोई बात नहीं। देखो तुम तो बेकार चीज को डर रहे थे; 'ये देखो, प्रकाश लेकर।' फिर वो अपनी बुद्धि से तो समझ लेता है, पर फिर डरता है।

लेकिन जब दोनों चीज एक हो जाती हैं—आप इस बात को समझने की कोशिश कीजिये—कि जिस मस्तिष्क से आप सोचते हैं, जो आपके मन को समझाता है और सम्भालता है, वही आपका मन अगर हो जाए; यानि, समझ लीजिये कि ऐसा कोई instrument (यन्त्र) हो कि जिसमें accelerator

(गति बढ़ाने वाला) और brake (रोकने वाला), दोनों automatic (स्वचालित) हों, और दोनों 'एक' हों—जब चाहे तो वो brake बन जाए, और जब चाहे तो वो accelerator हो जाए –और वो सब जानता है।

ऐसी जब दशा आ जाए, तो आप पूरे गुरु हो गये। ऐसी दशा हमको आनी चाहिये। अभी तक आप लोग काफ़ी उन्नति कर गए हैं, काफ़ी ऊँचे स्तर पर पहुँच गए हैं। ज़रूर अब आपको कहना चाहिए कि अब आप श्रीफल हो गये हैं। लेकिन मैं हमेशा आगे की बात इसलिये करती हूँ कि इस पेड़ पर अगर चढ़ना हो, तो क्या आपने देखा है, कि किस तरह से लोग चढ़ते हैं? अगर एक आदमी को चढ़ाकर देखिये तो आप समझ जाएंगे कि वो एक डोर बाँध लेता है चारों तरफ़ से अपने, और उस डोर को ऊपर फँसाते जाता है। वो डोर जब ऊपर फँस जाता है, तो उस पर वो चढ़ता है। इसी तरह से अपनी डोर को ऊँची फँसाते जाना है। और यही जब आप सीख लेंगे, तभी आपका चढ़ना बहुत जल्दी हो सकेगा।

पर ज्यादातर हम डोर को नीचे ही फँसाते रहते हैं। सहजयोग में जाने के बाद भी डोर हम नीचे की तरफ़ फँसाते हैं, और कहते हैं कि 'माँ हमारी तो कोई प्रगति नहीं हुई।' अब होगी कैसे? जब तुम डोर ही उल्टी तरफ़ फँसा कर नीचे उतरने की व्यवस्था करते हो। जिस वक़्त नीचे उतरना है, तो फिर डोर को फँसाने की भी ज़रूरत नहीं। आप ज़रा-सी ढील दे दीजिये, ढर-ढर-ढर आप नीचे चले आएँगे। वह तो इन्तजाम से बना हुआ है—नीचे आने का। ऊपर चढ़ने का इन्तजाम बनाना पड़ता है। तो कुछ बनने के लिए मेहनत करनी पड़ती है। और जो पाया है, उसे खोने के लिये कोई मेहनत की ज़रूरत नहीं—आप सीधे चले आइये ज़मीन पर; उसमें कोई तो प्रश्न खड़ा नहीं होता।

इसको अगर आप समझ लें, इस बात को, तो आप जान लेंगे कि 'नज़र अपनी हमेशा ऊँची रखें'। अगर कोई भी सीढ़ी पर आप खड़े हैं, लेकिन आप की नज़र ऊँची है, तो वो आदमी 'उस' आदमी से ऊँचा है 'जो' ऊपर खड़े होकर भी नज़र नीची रखता है। इसीलिये कभी-कभी बड़े पुराने सहज योगी भी 'धक' से नीचे चले आते हैं। लोग बताते हैं कि 'माँ ये तो बड़े पुराने सहजयोगी थे। इतने साल से आपके साथ रहे, ये किया, वो किया—पर नज़र तो उनकी हमेशा नीचे रही! तो मैं क्या करूँ अगर ज़र नीचे रखी तो वो चले आये नीचे। नज़र हमेशा ऊपर रखनी चाहिए। अब इसे भी फल को देखना है तो नज़र आपकी ऊपर। इनकी भी नज़र ऊपर है। इन सबकी नज़र ऊपर है, क्यों कि बगैर नज़र ऊपर किये हुए वो जानते हैं कि न हम सूर्य को पा सकते हैं, न ही ये कार्य हो सकता है; 'न तो हम श्रीफल बन सकते हैं'।

वृक्ष को बहुत अच्छे से देखना चाहिये और समझना चाहिये। सहजयोग आप वृक्ष से बहुत अच्छे से सीख सकते हैं। बड़ा भारी ये आपके लिये गुरू है। जैसे कि जब हम वृक्ष की ओर देखते हैं, तो पहले देखना चाहिये कि ये अपनी जड़ों को कैसे बैठाता है। पहले अपनी जड़ को ये सम्भाल लेता है और जड़ को सम्भालने के लिये ये क्या करता है। जड़ में घुसा जाता है। ये हमारा धर्म है, ये हमारा चित्त है—'इसमें' ये घुसा चला जाता है और उसी चित्त से वो खींचता है, उस सर्वव्यापी शक्ति को। ये तो उल्टा पेड़ है, ऐसा कहिये तो ठीक है। उस सर्वव्यापी शक्ति को ये जड़ खींचने लग जाता है, और इसको खींचने के बाद में आखिर उसको खींच कर करना क्या है? फिर उसकी नज़र ऊपर जाती है और इसी प्रकार वो श्रीफल बना हुआ है।

आपका सहस्रार भी इसी श्रीफल जैसा है। माँ को अत्यन्त प्रिय है और इसी सहस्रार को समर्पण करना चाहिये। अनेक लोगों ने कल मुझसे कहा कि 'माँ, हाथ में तो ठण्डा आता है, पैर में भी ठण्डा आता है, पर यहां नहीं आता।' वहाँ कौन बैठा

हुआ है ? बस इसको जान लेना चाहिये, यहाँ से ठण्डक आ जाएगी।

और वहाँ जो बैठे हुए हैं, वो सारे ही चीजों का फल हैं। इस पेड़ की जो नीचे गढ़ी हुई जड़ें हैं, वो भी उसी से जन्मी हैं। इसकी जो तना है, इसकी जो मेहनत है, इसका जो evolution (उत्क्रान्ति) है, यह 'सब' कुछ अन्त में जाकर के वो फल बना। उस फल में सब कुछ निहित है। फिर से आप उस फल को जमीन में डाल दीजिये, फिर से वही सारी चीज निकल आयेगी। "वो सबका अर्थ यही है, वो सबका अन्त वही है। सारे संसार में जो कुछ भी आज तक परमात्मा का कार्य हुआ है, जो भी उन्हों ने कार्य किया है, उसका सारा समग्र-स्वरूप, फल-स्वरूप आज का हमारा यह महायोग है। और उसकी स्वामिनी कौन हैं ? आप जानते हैं। तो ऐसे शुभ अवसर में आकर के आपने ये प्राप्त किया है, सो धन्य समझना चाहिए और इस श्रीफल स्वरूप होकर के और समर्पित होना चाहिये।

पेड़ से तभी फल हटाया जाता है जब वो परिपक्व होता है, नहीं तो बेकार है। पकने से पहले वो माँ को नहीं दिया जाता। इसलिये परिपक्वता आनी चाहिये। बचपना छोड़ देना चाहिए। जब तक बचपना रहेगा, आप पेड़ से चिपके रहेंगे। लेकिन समर्पण के लिये पेड़ पर चिपका हुआ फल किस काम का ? उस पेड़ से हटाकर के जो अगर वो समर्पित हो तभी माना जाता है कि पूजा सम्पन्न हुई। इसलिये सहजयोग को समझने के लिये एक बड़ा भारी आपके सामने प्रतीक रूप से स्वयं साक्षात् श्रीफल ही खड़ा हुआ है। यह बड़ी मेहरबानी हो गई कि आज यहाँ पर हम लोग सब एकत्रित हुए और इस महान् समारोह में इन सब पेड़ों ने भी हमारा साथ दिया है। यह भी सारी बातों से नादित, यह भी स्पन्दित और यह भी सुन रहे हैं; उसी ताल पर यह भी नाच रहे हैं। यह भी समझ रहे हैं कि बात क्या है।

इसी प्रकार आप लोग के भी श्रीफल हैं, उसको पूरी तरह से परिपक्व, उसको परिपक्व करने का एक ही तरीका है कि अपने हृदय से सामञ्जस्य बनायें। हृदय से एकाकार होने की चीज़ है। हृदय में और मस्तिष्क में कोई भी अन्तर नहीं है। हृदय से इच्छा करते हैं और मस्तिष्क से उसकी पूर्ति करते हैं। दोनों चीजें जब एकाकार हो जायेंगी तभी आपको पूरा लाभ होगा।

अब सर्वसाधारण लोगों के लिये सहजयोग एक बड़ी secret (रहस्यमयी) बात है। उनकी समझ में नहीं आने वाली—क्योंकि उनका जीवन ही रोज मर्रा का उसी level (स्तर) का है। उस पर वो चलते हैं। लेकिन आपका level अलग है। आप अपने level से रहिये। दूसरों की ओर अधिकतर जब आप देखते हैं तो दया-दृष्टि से, क्योंकि यह बेचारे क्या हैं, इनका क्या होने वाला है। यह कहाँ जायेंगे इनकी समझ में नहीं आता, इनकी गति ही क्या है? यह कौन-से मार्ग में पहुँचने वाले हैं ? इसको समझ करके और आप लोग यह समझें कि इनको अगर समझाने से समझ आ जाये सहजयोग, तो बहुत अच्छा है—समझाया जाए। लेकिन अगर यह लोग परवाह न करें तो इनके आगे सर फोड़ने से कोई फ़ायदा नहीं। अपने श्रीफल को फ़ोड़ने से कोई फ़ायदा नहीं। इसको बचाकर रखें। इसका कार्य बहुत ऊँचा है।

इसको बड़ी ऊँची चीज के लिये आपने पाया हुआ है और उसी उँचे स्तर पर इसे रखें और उसी सम्पन्न अद्भुत स्थिति को प्राप्त होने पर ही आप अपने को धन्य समझ सकते हैं। इसलिये हमको व्यर्थ चीज़ों के लिये अपनी खोपड़ी फाड़ने की कोई ज़रूरत नहीं। किसी से argue (बहस) करने की ज़रूरत नहीं। पर अपनी स्थिति को बनाये रखना चाहिए। नीचे उतरना नहीं चाहिए। जब तक यह नहीं होगा तब तक सहजयोग का पूरा-पूरा आप में जो कुछ समर्पण पाना था वो नहीं पाया। जो

कुछ अपनाना था, वो नहीं पाया। जो कुछ growth (वृद्धि) थी वो नहीं पाई। जो आपकी पूरी तरह से सरदारगीरी पूरी उन्नति होने की थी, वो नहीं हुई और आप ग़लतफ़हमी में फँस गये। इसलिये किसी भी मिथ्या चीज़ पर आप यह न सोचें कि हम कोई बड़े भारी सहजयोगी हो गये या कुछ हो गये। जब आप बहुत बड़े हो जाते हैं तो आप झुक जाते हैं, आप झुक जाते हैं।

देखिये, इन तीन पेड़ों की ओर, हवा उल्टी तरफ़ बह रही है। वास्तव में तो पेड़ों को इस तरफ़ झुक जाना चाहिये जबकि हवा इस तरफ़ बह रही है। लेकिन पेड़ किस तरफ़ झुके जा रहे हैं? आप लोगों ने कभी mark किया है कि सारे पेड़ों की दिशा उधर है। क्यों? वहाँ से तो हवा आकरके उसको धकेले जा रही है फिर तो भी पेड़ उसी तरफ़ क्यों झुक रहे हैं? और अगर ये हवा न चले तो न जाने और कितने ये लोग झुक जायें। क्योंकि ये जानते हैं कि सबको देने वाला "वो" है। उसके प्रति नतमस्तक होकर के वो झुक रहे हैं और 'वो' देने वाला जो है, वो है "धर्म"। हमारे अन्दर जो धर्म है जब वो पूरी तरह से जागृत होगा, पूरी तरह से कार्यान्वित होगा, तभी हमारे अन्दर के श्रीफल इतने मीठे, सुन्दर और पौष्टिक होंगे। फिर तो आपके जीवन से ही संसार आपको जानेगा और किसी चीज से नहीं जानेगा, आप लोग कैसे हैं।

अब चौदह बार आप इसका जन्मदिन, इस सहस्रार का मना रहे हैं। और न जाने कितने साल और इसका मनाएँगे। लेकिन जो भी आपने इस सहस्रार तक जन्मदिन मनाया उसी के साथ-साथ आपका भी सहस्रार खुल रहा है और बढ़ रहा है।

कोई भी तरह का compromise (समझौता) करना, कोई भी तरह की बातों में अपने को ढील दे देना, सहजयोगियों को शोभा नहीं देता। जो आदमी सहजयोगी हैं वो वीरस्वपूर्ण अपना मार्ग आगे बढ़ाना चाहिये। कितनी भी रुकावटें आयें, घर वाले हैं, family वाले हैं, ये हैं, वो हैं, तमाशे हैं, इनका कोई मतलब नहीं। ये सब आपके हो चुके हजार बार। इस जन्म में आपको पाने का है और आपके पाने से और लोग पा गये तो उनका धन्य है, उनका भाग्य है। नहीं पा गये तो क्या आप क्या उनको अपने हाथ से पकड़कर ऊपर ले जाओगे? यह तो ऐसा हो गया कि आप समुद्र में जायें और अपने पैर में बड़े-बड़े पत्थर जोड़ लें और कहें कि 'समुद्र, देखो, मुझे तो तैराकर ले जाओ।' समुद्र कहेगा कि 'भई! ये पत्थर तो छोड़ो पहले पैर के, नहीं तो कैसे ले जाऊंगा, मैं?' पैर में बड़े-बड़े आप ने लोढ़ बाँध दिये तो उनको कटवा ही देना अच्छा है और नहीं कटवा सकते तो कम-से-कम ये करो कि उनसे परे रहो। इस तरह की चीजें जो-जो आपने पैर में बाँध रखी हैं, उसे एकदम तोड़-ताड़ कर ऊपर उठ जाओ। कहना, 'जाइये, आपको जो करना है करिये लेकिन हम से कोई मतलब नहीं क्योंकि और ऐसे ही कितनी बाधायें हैं और यह फ़ालतू की बाधायें लगा लेने से कोई फ़ायदा नहीं।

जिस तरह से ये पेड़ देखिये, इतना भारी फल उसको उठा लेते हैं—ऊपर। कितना भारी होता है यह फल, इसके अन्दर पानी होता है। इस फल को उसने ऊपर उठाया है। इसी प्रकार आपको भी इस सर को उठाना है। और इस सर को उठाते वक्त ये याद रखना चाहिए कि सर को नत मस्तक होना चाहिये, समुद्र की ओर। समुद्र जो है, ये धर्म का लक्षण है। इसको धर्म की ओर नतमस्तक होना चाहिए। बहुत-से सहजयोगी यह समझते ही नहीं हैं कि जब तक हम 'धर्म' में पूरी तरह नहीं उतरते, हम सहजयोगी हो ही नहीं सकते। हर तरह की ग़लतियाँ करते रहते हैं। जैसे बहुत-से लोग हैं, तम्बाकू खाते हैं, सिगरेट पीते हैं, शराब पीते हैं, ये सब करते रहते हैं और फिर कहते हैं हमारी सहज योग में प्रगति नहीं हुई।' तो होगी कैसे? आप अपने ही पीछे हाथ धो करके लगे हैं।

सहजयोग के कुछ छोटे-छोटे नियम हैं, बहुत simple (सादे) हैं—इसके लिये आपको शक्ति मिली है वो पूरी तरह से आप अपने आचरण में व्यवहार में लायें। और सबसे बड़ी चीज जो इनके (पेड़ों के) झुकाव में है वो नतमस्तक होना, और उस प्रेम को अपने अन्दर से दर्शित करना। जो कुछ आपने परमात्मा से पाया, उस प्रेम को परमात्मा को समर्पित करते हुए याद रखना चाहिए कि सबके प्रति प्रेम हो।

अन्त में यही कहना चाहिये कि जिस मस्तिष्क में, जिस सहस्रार में प्रेम नहीं हो, वहाँ हमारा वास नहीं है। सिर्फ़ दिमाग में प्रेम ही की बात आनी चाहिये कि प्रेम के लक्षण में क्या करना है। गहराई से सोचें, तो मैं फिर वही कह रही हूँ कि दिल को कैसे हम प्रेम में ला सकते हैं। यही सोचना चाहिये कि क्या ये मैं प्रेम में कर रहा हूँ ? ये क्या प्रेम में बात हो रही है ? सारी चीज़ मैं प्रेम में कर रही हूँ। ये सब कुछ बोलना मेरा, करना-धरना क्या प्रेम में हो रहा है ? किसी को मार-पीट भी सकते हैं आप प्रेम में। इसमें हर्ज नहीं। अगर झूट बात हो तो मार सकते हैं—कोई हर्ज नहीं। लेकिन यह क्या प्रेम में हो रहा है ? देवीजी ने इतने राक्षसों को मारा, वो भी प्रेम में ही मारा। उन से भी प्रेम किया, उससे वो ज़्यादा नहीं, और भी राक्षस के महाराक्षस न बन जायें और अपने भक्तों को प्रेम की वजह से, उनको बचाने के लिये, उनको मारा। उस अनन्त शक्ति में भी प्रेम का ही भाव है जिससे उनका हित हो वही प्रेम है।

तो क्या आप इस तरह का प्रेम कर रहे हैं कि जिससे उनका हित हो ? यह सोचना है। और अगर कर रहे हैं तो आपने वो चीज पा ली जो मैं कह रही थी कि सामञ्जस्य आना चाहिए। तो वो सामञ्जस्य आपके अन्दर आ गया।

एक ही शक्ति है जिसे हम कह सकते हैं 'प्रेम' और प्रेम ही से सब आकारित होने से सब चीज़ सुन्दर, सुडौल और व्यवस्थित हो सकती है। जो सिर्फ़ शुष्क विचार है उसमें कोई अर्थ नहीं। और शुष्क विचार तो आप जानते ही हैं, वो सिर्फ़ अहङ्कार से आता है और जो मन से आने वाली चीज है वो दूसरी—ऊपर से ज़रूरी उसको ख़ूबसूरती ला देती है लेकिन अन्दर से खोखली है। इसलिए एक चीज गन्दी होती है लेकिन शुष्क होती है, दूसरी चीज सुन्दर होती है लेकिन नीरस होती है, पूर्णतया खोखली होती है। एक नीरस है, तो दूसरी खोखली। दोनों चीज़ों का सामञ्जस्य इस तरह से बैठ ही नहीं सकता क्योंकि एक दूसरे के विरोध में हैं।

लेकिन Realization (आत्म-साक्षात्कार) के बाद में, सहजयोग में आने के बाद में सारे विरोध छूटकर के जो चीज विरोधात्मक लगती है, वो ऐसा लगता है कि वो एक ही चीज के दो अङ्ग हैं। और यह आपके अन्दर हो जाना चाहिये। जिस दिन ये चीज घटित होगी, तब हमें मानना पड़ेगा कि हमने अपने सहस्रार का १४वाँ जन्मदिन पूरी तरह से मनाया।

परमात्मा आप सबको सुखी रखे और इस शुभ अवसर पर हमारी ओर से और सारे देवताओं की ओर से, परमात्मा की ओर से आप सब को अनन्त आशीर्वाद।

परमात्मा को खोजने वाले सभी साधकों को मेरा प्रणाम !

मनुष्य यह नहीं जानता है कि वह अपनी सारी इच्छाओं में सिर्फ़ परमात्मा ही को खोजता है। अगर वह किसी संसार की वस्तु मात्र के पीछे दौड़ता है, वह भी उस परमात्मा ही को खोजता है, हालांकि रास्ता ग़लत है। अगर वह बड़ी कीर्ति और मान-सम्पदा पाने के लिए ससार में कार्य करता है, तो भी वह परमात्मा को ही खोजता है। और जब वह कोई शक्तिशाली व्यक्ति बनकर संसार में विचरण करता है, तब भी वह परमात्मा को ही खोजता है। लेकिन परमात्मा को खोजने का रास्ता जरा उल्टा बन पड़ा। जैसे कि वस्तुमात्र जो है, उसको जब हम खोजते हैं—पैसा और सम्पत्ति, सम्पदा—इसकी ओर जब हम दौड़ते हैं तो व्यवहार में देखा जाता है कि ऐसे मनुष्य सुखी नहीं होते। उन पैसों की विवञ्चनाएं, अधिक पैसा होने के कारण बुरी आदतें लग जाना, बच्चों का व्यर्थ जाना आदि 'अनेक' अनर्थ हो जाते हैं। जिससे मनुष्य सोचता है कि "ये पैसा मैंने किस लिए कमाया? यह मैंने वस्तुमात्र किसलिए ली ?" जिस वक़्त यहाँ से जाना होता है तो मनुष्य हाथ फैलाकर चला जाता है। लेकिन यही वस्तु, जब आप परमात्मा को पा लेते हैं, जब आप आत्मा पा लेते हैं और जब आप का चित्त आत्मा पर स्थिर हो जाता है, तब यही खोज एक बड़ा सुन्दर स्वरूप धारण कर लेती है। परमात्मा के प्रकाश में वस्तुमात्र की एक नयी दिशा दिखाई देने लग जाती है। मनुष्य की सौंदर्य दृष्टि एक गहनता से हर चीज को देखती है। जैसे कि आज यहाँ बड़ा सुन्दर वातावरण है, और सारे तरफ़ से वृक्ष हैं। ये सब आप देख रहे हैं। जब आपने परमात्मा को पाया नहीं, तब आप यह सोचते हैं कि "अगर ऐसे वृक्ष मैं भी लगा लूं तो कैसा रहेगा? मेरे घर में ऐसे वृक्ष होने चाहिएँ। मेरे पास ऐसा आँगन होना चाहिए। ऐसे प्राङ्गण में, मैं ही बैठूं और मैं ही उठूं।" फिर वह मिलने के बाद वह दूसरी बात सोचने लगते हैं कि यह चीज़ लें वह चीज लें। इस तरह से जो यह पाया हुआ है इसका भी आनन्द नहीं उठाते। आज यह हुआ कि हमने एक मोटर खरीद ली, उसके बाद मोटर के लिए भी हाय तोबा करके वह किसी तरह से प्राप्त की। उस के बाद हमें चाहिए कि अब एक बड़ा मकान बनालें और वह भी बनाने के बाद में हाय तोबा हुई तो फिर और चाहें और कुछ कर लें। इस तरह से चीज आपने पाई थी वास्तविक, जिसके लिए आपने इतनी परेशानी उठाई थी, उसका आनन्द तो इतना भी आपने प्राप्त नहीं किया और लगे दूसरी जगह दौड़ने। जब तक वह मिली नहीं तब तक हवस रही; और जैसे ही वह चीज मिल गयी, वो खत्म हो गयी। लेकिन परमात्मा को पाने के बाद में ये सारी जो सृष्टि है, ये बनाने में परमात्मा ने जो कुछ भी आनन्दकी सृष्टि की हुई है, उस कलाकार ने जो कुछ इसमें रचा हुआ है, बारीक-सारीक सब कुछ, वो सारा का सारा आनन्द अन्दर झरने लग जाता है। जो चीज आज ऐसी लगती है कि मिलनी चाहिए—और मिलने पर फिर व्यर्थ हो जाती है, वही चीज अपने अर्थ में खड़ी हो जाती है। अगर और कोई वस्तुमात्र आपने ली, उसका आनन्द ही जब आप उठा नहीं सकते हैं, तो उसको पाने की इच्छा करना भी तो बेकार ही है। जब उस चीज का आनन्द एक क्षण भी नहीं आप उठा सकते तो उस चीज के लिए इतनी ज्यादा आफ़त मचाने की क्या जरूरत है ?

वस्तुमात्र में भी—कोई वस्तु को आपने, समझ लीजिये, चाहा कि मैं इसे खरीद लूं। आपका मन किया कि इसे हम खरीद लें, कोई अच्छी-सी चीज दिखाई दी। जैसे औरतों को है कि कोई जेवर खरीद लें। अब खरीदने के बाद उसका सर दर्द हो

गया। इसको Insure (बीमा) कराओ कि इसे चोर न ले जायें, तो इसे पहनो मत, तो बैङ्क में रखो, अब यह परेशानी एक बनी रही। और इसका आनन्द तो उठा ही नहीं सके। और जब भी पहने, तो जो देखे वह ही जल जाए इससे। माने उसकी आनन्द की जो स्थिति है वह तो एकदम खत्म हो चुकी और बचा उसका जो कुछ भी नीरसता का जो अनुभव है, वह गढ़ता है, और दुखदायी होता है। उसी की जगह जब आप परमात्मा को प्राप्त करते हैं और आप कोई चीज खरीदते हैं तो यही सोचते हैं कि इसको मैं किसे दूं। ये किसके लिए सुखदायी होगी। इसका शौक़ किसको आया। क्योंकि अपने तो सब शौक़ पूरे हो गये। शौक़ एक ही बच जाता है कि किसे क्या दूं। फिर खयाल बनता है कि देखो उस दिन उन्होंने कहा था कि हमारे पास ये चीज नहीं है। तो आपने वह चीज उन्हें ले जाके देदी। इसलिए नहीं कि आप कोई बड़ा उपकार करते हैं। दे दी, बस। जैसे पेड़ है, कोई उपकार करता थोड़े ही है, अपने को कहता है उसमें फल आ गये, वह फल दे देता है। इसी प्रकार आपने जाकर के वह चीज किसी को दे दी। अब देखिये उसमें आपके प्रेम की जो भावना आ गयी, आपने अपनी आत्मा से जो चीज उनको दे दी, उनका खयाल करके। 'छोटी-सी' भी चीज। जैसे शबरी के बेर। श्री रामचन्द्र जी ने इतने प्रेम से खाये। और उसके बाद उसकी इतनी प्रशंसा की, सीता जी को भी। तो लक्ष्मण जी नाराज हो रहे थे। सीता जी ने कहा, 'देवरजी आप जरा चखकर तो देखिये। ऐसे बेर मैंने जिन्दगी में नहीं खाये।" तो भाभी पर विश्वास करके उन्होंने एक बेर खाया, कहने लगे ये तो स्वर्गीय है। उस शबरी के बेर में इतना आनन्द इसलिए आया कि नितान्त प्रेम से उसने वह बेर तोड़ के, अपने दांत से देखकर के, बिल्कुल 'अबोध' तरीके से innocently उसने परमात्मा के चरणों में रखा। 'उसी प्रकार हो जाता है।

तो जो वस्तुमात्र से जो तकलीफ़ें होती हैं वह खत्म हो जाती हैं। सारी दृष्टि ही बदल जाती है। और समझ लीजिये अगर किसी और की वस्तु है तब तो बहुत ही अच्छा है। माने उसका सरदर्द तो है नहीं, मजा आप उठा रहे हैं। जैसे समझ लीजिए एक बड़ा बढ़िया क़ालीन किसी के यहाँ बिछा हुआ है। अपना है नहीं भगवान की कृपा से। दूसरे का है। उस वक्त आप अगर उस क़ालीन की ओर देखते हैं तो आप ये नहीं सोचते कि इसने कहाँ से खरीदा, कौन-से बाजार से। उस वक्त एक तान होकर उसे देखते हैं, और अगर आपको परमात्मा का साक्षात्कार हो चुका है, तो आपके अन्दर कोई विचार ही नहीं आएगा उसके बारे में। आप कोई विचार ही नहीं करेंगे कि ये कितने पैसे का खरीदा, कुछ नहीं। जो उसमें आनन्द है 'पूरा का पूरा' तो जिस कलाकार ने उसे बनाया है उसका पूरा का पूरा आप आनन्द उठा रहे हैं और जिसका है, वह सरदर्द लिए बैठा है कि इस पर कोई चल न जाए नहीं तो खराब हो जाएगा। और अपनी नजर से तो आप उसका पूरा का पूरा आनन्द, स्वाद ले रहे हैं क्योंकि आपका उसके साथ कोई सम्बन्ध ही बना नहीं है, आप दूर ही से उसे देख रहे हैं। और दूर ही के दर्शन सुन्दर होते हैं। जब आप दूर हटकर उस चीज को देखते हैं, तभी पूरी-की-पूरी चीज आपके अन्दर उतर सकती है।

बहुत-से लोगों का यह कहना कि "माँ इस देश में परमात्मा की बात बहुत की जाती है लेकिन यहाँ लोग ग़रीब क्यों हैं?" अमीरी की वजह से इन देशों का जो हाल हुआ कि इसलिए मैं कहती हूँ, भगवान करे थोड़े दिन और हम लोग ग़रीब बने रहें। न तो बच्चों का पता है न घर का पता है, न बीवी का पता है, न पति का पता है, न कोई प्रेम का पता है। जब जिन देशों में बच्चों को लेकर के मार दिया जाता है पैदा होते ही। इतनी दुष्टता वहाँ पर होती है, इतनी महादुष्टता वहाँ लोग करते हैं कि जिसकी कोई इन्तहा नहीं। कोई सोच भी नहीं सकता कि

इस मर्यादा-रहित दुष्टता के आप भागीदार हैं। अभी एक साहब से वार्तालाप हुआ तो उन्होंने कहा कि परदेस में लोग कम से कम ईमानदार हैं। मैंने कहा ईमानदार तो औरंगज़ेब भी था। अपनी टोपियाँ सिल-सिल करके बेचता था और सरकार से उसने एक पैसा नहीं लिया। लेकिन लेता तो अच्छा रहता कुछ। कम से कम इतने ब्राह्मणों को मारता न। हिटलर भी बड़ा ईमानदार आदमी था। एक पैसा जो था वह अपने सरकारी खज़ाने से नहीं निकालता था। लेकिन उसकी ईमानदारी का क्या फ़ायदा? इतनी दुष्टता उसमें आ गयी, मानो इन्सान में अगर कोई चीज बहुत ज्यादा आ जाती है, तो वह दूसरी तरफ़ एक दूसरा ही आकार ले लेती है। अगर वह ईमानदारी को, उसने सोचा कि देश जो है मेरा बहुत बड़ा है तो उसमें ईमानदारी से रहना है, तब ये गुण बड़ा अच्छा है। पर उसके कारण अगर आपके अन्दर कोई गन्दी बात घुस जाये तो अच्छा है कि आप खुद सन्तुलित रहें।

अब बहुत-से लोग अपने को बड़े सत्ताधीश समझते हैं। सत्ता के लिए दौड़ते हैं। सत्ता के लिए दौड़-दौड़ कर कोई सुखी नहीं हुआ। एक तो यह कि किस वक्त उतर जाएँ, पता नहीं। किस वक्त इन को शह मिले और किस वक्त उतर जाएँ सत्ता से, किसी को पता नहीं। आज ताज है और कल काँटे लग जाएँ। इस सत्ता का कोई ठिकाना नहीं और उस सत्ता से आप कुछ अपना भी और दूसरों का भी खास लाभ नहीं कर सकते। पर जो परमात्मा की सत्ता पर बैठा है, जिसमें परमात्मा की सत्ता है, जिसके अन्दर परमात्मा बोलता है, जिसके अन्दर परमात्मा की शक्ति बहती है, वो आदमी 'असल' में बादशाह है, सत्ताधीश है। बादशाहत है उसके पास। वह bribe (रिश्वत) काहे को लेने चला? बादशाह कोई bribe (रिश्वत) लेता है क्या? वह क्यों बेईमानी करने चला? वह बादशाह है। उस को अगर आप ज़मीन पर सुला दीजिये तो भी बादशाह है, उसको महलों में रखें तो भी बादशाह है। उसको भूखा रहना पड़े तो भी वह बादशाह है, वह कोई चीज़ की माँग नहीं करता। वो ही बादशाहत में होता है, जिसको किसी भी चीज़ की माँग नहीं है, कोई भी चीज़ की ददात नहीं है, किसी चीज़ की ग़र्ज नहीं है। वह ही असल बादशाह है, बाक़ी ये तो नक़ली हैं बादशाह। जो कि बादशाहत थोड़ी बहुत मिलने के बाद "यह चाहिए, वह चाहिए, वह चाहिए" माने आपकी बादशाहत क्या है? अन्दर की जिसके अन्दर बादशाहत जागृत हो गयी, वो हर हालत में रह सकता है, हर परिस्थिति में रह सकता है, हर दशा में रह सकता है और कोई दुनिया की चीज नहीं जो उसे झुका दे। हमारे सामने ऐसे अनेक उदाहरण हैं। इस भारतवर्ष में तो अनेक हो ही गये और बाहर भी बहुत-से हो गये। क्योंकि वो अपनी बादशाहत में सन्तुष्ट हैं, उसकी सत्ता जो है 'स्थायी' सत्ता है। इस तरह की क्षण भंगुर नहीं कि जो क्षण में यहाँ पर तो बड़े बने बैठे हैं और उसके बाद पड़ गये ज़मीन पर। जैसे ध्रुव का तारा टिक गया है, ऐसे ही परमात्मा को पाया हुआ मनुष्य टिका रहता है। उसको भय नाम की चीज़ मालूम नहीं, उसको लालसा नाम की चीज मालूम नहीं, उसको लालच नाम की चीज़ मालूम नहीं। ऐसा मनुष्य जब इस देश में तैयार होगा तो हम लोगों को कोई भी ऊपर से कायदे क़ानून लादने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी, अपने आप वह मस्ती में रहेगा। वह बेक़ायदा चलेगा ही नहीं। क्योंकि क़ायदे भी कहाँ से आये हैं? क़ायदे भी परमात्मा ही के सृजन किये हुए अपने अन्दर आये हुए हैं। उसका जितना भी विपर्यास हुआ, जो मनुष्यों ने कर दिया है, वह भी बदल जाएगा। पर उस मानव को तैयार करना होगा जिसने परमात्मा को पाया है। ऐसे मानव जब तक तैयार नहीं होयेंगे वे लड़खड़ाते ही रहेंगे। पहले जबकि उनको किसी भी बड़े भारी चुनाव में जाना पड़ता है, तो चुनाव में आके कहेंगे कि "साहब हम तो ग़रीबों के लिए ये करेंगे वह

करेंगे ऐसा करेंगे, दुनिया भर के सारे आश्वासन होंगे। और जब वह सत्तार्धीश हो जायेंगे तो "साहब हमको यह चाहिये, हमको यह चाहिए । और हम तो सबसे बड़े ग़रीब हो गये।" क्योंकि ग़रीबों के लिए करने की कोई ज़रूरत ही दिखाई नहीं देती है। उनसे भी ज्यादा ग़रीब ये हो जाने की वजह से वह सब अपने लिए ही headache (सरदर्द)। लेकिन जिसने परमात्मा को एक बार पा लिया, वो कोई चीज़ की माँग नहीं करता। वह कभी माँगता ही नहीं है, वह कोई भिखारी कभी नहीं हो सकता। मैंने कहा, 'वह बादशाह हो जाता है।' ये बादशाहत अपने अन्दर हमको स्थापित करनी है। अब कोई लोग कहते हैं कि साहब "हिन्दुस्तान में इतनी चोरी-चकारी और ये सब चलीं। इसका इलाज क्या है" ? इसका इलाज बहुत सीधा है ! आत्म साक्षात्कार को प्राप्त करें। क्योंकि अभी अन्धेरे में हैं, अज्ञान में हैं, इसलिए ऐसी रद्दी चीजों के पीछे भागते हैं। इसमें रखा क्या है ? यह तो सब यहीं छोड़ के जाने का है। एक छोटी-सी चीज जो रोज देख रहे हैं वह ही भूल जाते हैं। किसी के मय्यद पे चले गये, वहाँ से आए और उसके बाद लगे bribe (रिश्वत) लेने। 'अरे ! अभी मय्यद देखकर आ रहे हो, bribe क्या ले रहे हो ? अभी देखा नहीं वह चला गया वैसे के वैसे ! उसी तरह से आप भी जाने वाले हैं।' लेकिन यह कहने से नहीं होने वाला, यह सिर्फ़ आत्म-साक्षात्कार होने के बाद में घटित होता है। उसके बाद में आदमी छनता है और उस के अन्दर की यह जो छोटी-छोटी क्षुद्र बातें फ़ट से निकल जाती हैं।

अब उसके बाद कुछ लोग ऐसे हैं कि जो सोचते हैं कि हमारे बच्चों के लिए यह करना चाहिए, 'हमारी' बीवी, 'हमारा' बच्चा, 'हमारा' यह, 'हमारा' वह। इस ममत्व के चक्कर के सबने थपेड़ खाए हुए हैं, कोई एक ने नहीं खाए। जब बच्चे बड़े हो जाते हैं तो ऐसे आदमी को अच्छा थपेड़ देते हैं। लोग रोज़ देखते हैं, रोज़मर्रा देखते हैं। आपको तो मालूम है वाल्मीकि की कथा, मुझे फिर से बताने की ज़रूरत नहीं। पर जो तथ्य है उससे आप बहुत ज्यादा हैं। क्योंकि बच्चे बहुत ज्यादा बेशर्मी से materialistic (भौतिक) हो गए हैं। सब देश में ही लोग इस तरह से हो गए हैं। वो बात ही पैसे की करते हैं। वह बोलते ही हैं कि हमारी क़ीमत इतने हजार रुपये, हमारी क़ीमत... ... ... । सबने अपनी क़ीमत लगा ली है। ऐसी हालत में इन लोगों का चित्त इस बेकार की चीज़ से कैसे हटाना चाहिए ? उसका हटाने का भी वही मार्ग है, जैसे मैंने कहा कि आत्मा का दर्शन इनके अन्दर होना चाहिए। आत्मा के प्रकाश में ही मनुष्य देख सकता है कि 'कितनी' क्षुद्र वस्तु है। जैसे समझ लीजिए अन्धेरे में कोई चीज़ चमक रही है, तो उन्होंने सोचा कि "साहब बढ़िया कोई चीज़ चमक रही है, कोई हीरा-वीरा होगा।" लगे उसके पीछे दौड़ने ! और वो हीरा इधर से उधर भाग रहा है। उसके बाद में प्रकाश आ गया, देखा यह तो जुगनू था, जुगनू के पीछे हम लोग परेशान रहे। ये तो जुगनू था ! इस के लिए क्यों इतनी परेशानी उठानी ! इसलिए ये प्रकाश हमारे अन्दर आना ज़रूरी है।

अब बहुत-से लोग कहते हैं कि हम बहुत धर्मात्मा हैं। ऐसे भी बहुत-से लोग हैं, वह कहते हैं कि 'हम तो बड़े धर्मात्मा हैं। हम बड़े धार्मिक कार्य करते हैं, हमने इतने हॉस्पिटल (hospital) बना दिये, इतने स्कूल बना दिये, ये बना दिये, वो बना दिये।' ये भी काम से आज तक किसी ने तृप्ति तो मैंने पायी देखी नहीं। किसी को मैंने तृप्त देखा नहीं, शान्त देखा नहीं। इससे प्रेममय देखा नहीं, उसके अन्दर कोई सौन्दर्य भी देखा नहीं। क्योंकि ये जो आप काम कर रहे हैं, परमात्मा से सम्बन्ध किये बग़ैर, योग के बग़ैर, आपके अन्दर एक संस्था तैयार हो रही है, जिसे हम 'अहङ्कार' कहते हैं। अहङ्कार नाम है उसका। वो अहङ्कार हमारे अन्दर जमते

जाता है और कभी-कभी तो वो अहङ्कार ऐसा हो जाता है कि मानो जैसा कोई बड़ा भारी सर पर एक अहङ्कार का 'जहाज़' बना हुआ है। इस अहङ्कार के सहारे हम चलते रहते हैं और इस अहङ्कार से हम बड़े सुखी होते हैं कि कोई अगर हम से कहे कि भई "आप बड़े धर्मात्मा हैं, इन्होंने बड़ी संसार की सेवा करी और इन्होंने ये दिया और वो किया।" लेकिन इसमें कोई सत्य तो है नहीं। क्योंकि सेवा भी किसकी करने की है ? जब परमात्मा का आशीर्वाद मिल जाता है तो चराचर सारी सृष्टि में फैली हुई परमेश्वरी शक्ति पर आप का हाथ आ जाता है। आप यहीं बैठे-बैठे सबकी सेवा कर रहे हैं, अगर सेवा उसका नाम हो, तो। लेकिन जब वही आपके अन्दर से बह रही हो और जब आप उनसे ही एकाकार हो गये तो आप किस किसकी सेवा कर रहे हैं ? अगर ये हाथ मेरा दुख रहा है तो इस हाथ को अगर मैं रगड़ रही हूँ तो क्या मैं इसकी सेवा कर रही हूँ ? इस तरह का झूठा अहङ्कार मनुष्य के मन में फिर जागृत नहीं होता। और अहङ्कार मनुष्य को महा मूर्ख बना देता है। ये 'पहली देन' है अहंकार की, कि अहंकार से मनुष्य महामूर्ख, जिसको अंग्रेजी में stupid कहते हैं, वो हो जाता है। और उसके एक-एक अनुभव मैं देखती हूँ तो मुझे आश्चर्य लगता है कि इनका कब अहंकार उतरेगा और ये देखेंगे अपने को शीशे में। जैसे नारद जी ने एक बार देखा था अपने को तालाब में, कि कितने बड़े अहंकार से आप 'बिलकुल' अन्धकार में पड़े हुए हैं।

अब इससे आगे कुछ लोग इस तरह के हैं कि जो कहते हैं कि 'हम बड़े भक्ति करते हैं और हम खूब भगवान को मानते हैं।' ज्यादातर लोग भगवान के पास इसीलिए जाते हैं "मुझे पास करा दो, मुझे नौकरी दे दो, मुझे ये कर दो।" ये ऐसे कहने से कुछ भी नहीं होने वाला। क्योंकि कृष्ण ने कहा है कि 'योग क्षेम वहाम्यहं' पहले योग को प्राप्त करो और 'फिर' क्षेम वो बना देते हैं। जैसे इनके पास मिलने के लिए सुदामा जी गये थे। पहले उनसे योग घटित हुआ। ये कहानी बड़ी मार्मिक है। जब उन का योग श्री कृष्ण से घटित हुआ, 'उसके बाद' उन का क्षेम हुआ। जब तक उनका योग घटित नहीं हुआ था तब तक उनका क्षेम नहीं हुआ था। इसलिए जब तक आपका योग घटित नहीं होगा आपका क्षेम हो ही नहीं सकता है। कभी-कभी काकतालीय न्याय से हो भी जाए—थोड़ा-बहुत, इधर-उधर—तो भी वह मानना नहीं चाहिए कि आपने पाया है। पर बिल्कुल 'पूरी' तरह से आपका क्षेम तभी घटित हो सकता है जब आप योग को प्राप्त करें। और 'इस योग को प्राप्त करना ही आपकी एक ही शुद्ध इच्छा है। बाक़ी जितनी भी आपकी इच्छाएं हैं, मैंने बता दिया, वे सब 'बेकार' हैं, और उनको प्राप्त करने से आप कभी-भी सुखी भी नहीं हो सकते, आनन्द की तो बात छोड़ ही दीजिए।

और एक तरह के लोग दुनिया में होते हैं, कि जो सोचते हैं कि बड़ा हमने sacrifice(त्याग)कर दिया। हम तो बड़ा suffer (कष्ट सहन) करेंगे।' जैसे बहुत-से लोग होते हैं, सोचते हैं भगवान के लिए उपवास करो। भगवान के लिए अपने शरीर पर छुरी चलाओ। भगवान के लिए 'जितनी भी' घृणित चीजें हैं, उन्हें अपने शरीर पर करो। ऐसे पागल लोगों को भी बताना चाहिए कि ये शरीर परमात्मा ने बड़ी मेहनत से बनाया है। एक छोटे से amoeba (अमीबा) से आपको इन्सान बनाया है बड़ी मेहनत करके; किसी वजह से। और आप को पाना क्या है ? किसलिए बनाया परमात्मा ने? आपने तो अपने को कुछ भी नहीं बनाया। जो बनाया है 'उसी' की जीवन्त शक्ति ने बनाया है। वह क्यों बनाया है आपको ? 'कि आप एक दिन परमात्मा के साम्राज्य में आएं, उसमें पदार्पण करें,

आपका स्वागत हो। इसलिए उन्होंने आपको ये सुन्दर स्वरूप दिया हुआ है।' इसलिए नहीं दिया है कि आप इधर-उधर भटकते रहें। लेकिन उधर दृष्टि हमारी नहीं है न ! हम लोग यही सोचते हैं कि अगर माताजी के आत्म-साक्षात्कार की तरफ़ हम मुड़ें तो भई फिर क्या होगा ! हम सन्यासी हो जाएँगे। 'सहजयोग तो सन्यास के महाविरोध में है। 'महाविरोध !' अगर कोई सन्यासी आ जाए तो हम उससे कहते हैं कि जाकर कपड़े बदल कर आओ। सहजयोग सामान्य लोगों के लिए, जो गृहस्थी में रहते हैं, उनके लिए है। गृहस्थी बड़ा भारी 'महायज्ञ' है, उस महायज्ञ में जो गुजरा है वही सहजयोग में आता है, सन्यासियों में हमारा विश्वास बिल्कुल नहीं है। क्योंकि ये कपड़े पहनकर के आप किसको जता रहे हैं ? जो सन्यासी होता है वह तो सन्यासी है अन्दर से, वह क्या बाह्य में अपने ऊपर में कुछ sign board (नामपट) लगा कर नहीं घूमता है कि "मैं सन्यासी हूं"। ये झूँठे sign board लगाने की क्या जरूरत है ? और ग़लत-फ़हमी में अपने को रखना, अपने ही को आप cheat (धोखा) कर रहे हैं। तो दूसरों को करेंगे ही। जिसने अपने ही को धोखा दिया है वह दूसरों को भी धोखा ही देगा। तो इस प्रकार के भी विचार के कुछ लोग होते हैं कि जो अपने शरीर को दुख देना और दुनिया भर के दुःख सहना और परेशानी उठाना—इसका बड़ा अच्छा उदाहरण है Jews (यहूदी) लोग। अपने यहाँ भी ऐसे बहुत सारे हैं जो उपवास, तपास और दुनिया भर की आफ़तें करके, सिवाए बीमारी के और कुछ नहीं उठाते। पर Jew लोगों ने ये कहा कि हम ईसा मसीह को नहीं मानते हैं क्योंकि यह कहता है कि 'मैं तुम्हारे सारे पापों को खींच लूंगा अपने अन्दर।' और सही बात है। जब उनकी जागृति हो जाती है हमारे आज्ञा चक्र पर, तो वह खींच लेते हैं। लेकिन हम ईसामसीह को नहीं मानेंगे क्योंकि वह Jew था। इसलिए Jew लोग उनको नहीं मान सकते। और चाहे कोई माने तो माने। और इसलिए उन्हों ने कहा कि हम तो ये विश्वास करते हैं कि मनुष्य को ख़ूब suffer (कष्ट सहन) करना चाहिए। ख़ूब sufferings (कष्ट भोगना) होनी चाहिए। वह इतना दुःख उठाये। दुःख उठाने से ही परमात्मा मिलता है। यह उनका अपना विचार था। यानी यहाँ तक कि कोई saint (सन्त) है उसको कोई दुख दे रहा है तो वे कहते हैं कि ठीक ही है तुमको परमात्मा अच्छे से मिल जाएगा। जितना दुख हो, झेलो। जैसे ज्ञानेश्वर जी को हमने काफ़ी सताया। रामदास स्वामी को हमने कभी माना नहीं। तुका राम की तो हालत ही खराब कर दी। और भी जितने भी—नानक साहब हैं, कबीरदास हैं—सबको परेशान किया और यही कहकर कि "तुम तो सन्त हो, तुम तो गुस्सा ही नहीं हो सकते। हम सन्त नहीं हैं। माने यह कि जैसे सारे गुस्से का ठेका हमने ले रखा है और सारा सहने का ठेका आपने ले रखा है !" और ऐसे जो Jew लोग थे देखिए, उन पर कितनी बड़ी आफ़त आ गयी। भगवान ने एक हिटलर भेज दिया उनके लिए—जाओ इनको suffer करना है, करने दो। अब वह उल्टे बैठ गए हैं वह सब दुनिया को suffer कराएँगे। तो इस तरह की विक्षिप्त कल्पनाएँ अगर दिमाग में हों, तो भी मनुष्य कभी भी सुख नहीं पा सकता इस तरह की बड़ी ही ज्यादा तीव्र भावनाएँ किसी के प्रति कभी भी नहीं बनानी चाहिए। 'क्योंकि सभी परमात्मा की सन्तान हैं। किसी से भी द्वेष बनाना नहीं चाहिए।' कोई भी आप प्रश्न उठाइये। जैसे कि कोई कहेगा कि आज हिन्दू धर्म जो है, ये बड़ी विपत्ति में पड़ा है। मैं तो कहती हूँ कि कभी विपत्ति में पड़ ही नहीं सकता, अगर वह धर्म है तो। उसको कोई हाथ भी नहीं लगा सकता, अगर वह धर्म है, तो। पर वह politics (राजनीति) नहीं हैं। वह धर्म है। और धर्म को कोई छू ही नहीं सकता क्योंकि धर्म शाश्वत है। धर्म को कौन छू सकता है ? आनी जानी और मरना-जीना तो चलता रहता है, लेकिन

धर्म नष्ट नहीं हो सकता। अगर आप ही धर्मच्युत हो जाएँ तो धर्म नष्ट हो जाएगा, और नहीं तो आपका धर्म कोई नहीं तोड़ सकता। किसी की मजाल नहीं कि आपका धर्म तोड़े। पर धर्म को पहले अपने अन्दर जागृत करना चाहिए। जब तक आपके अन्दर धर्म जागृत नहीं होगा, जोकि आप देख रहे हैं (चित्र में) गोल बना हुआ है, इसके अन्दर आपके दस धर्म हैं, ये धर्म जब आपके अन्दर जागृत हो जायेंगे तो जो धर्म आप नष्ट कर रहे हैं रोज, रोज, किसी न किसी वजह से—क्योंकि आपकी बहुत सारी इच्छाएँ हैं, आपमें लालसाएँ हैं, वासनाएँ हैं, बहुत-सी आदतें पड़ गयी हैं, इसकी वजह से जो आपके अन्दर का धर्म रोज नष्ट हो रहा है वह जागृत होते ही आप धार्मिक हो जायेंगे। क्योंकि आप दूसरा काम कर ही नहीं सकते। जैसे मैं कभी भी नहीं कहती हूँ कि आप शराब मत पीओ। मैं नहीं कहती हूँ, क्योंकि कहने से आधे लोग उठ जायेंगे, फ़ायदा क्या ? मैं कहती हूँ : अच्छा पार हो जाओ। माँ के तरीके उल्टे होते हैं न। चलो भई पहले पार हो जाओ। फिर मैं कहूँगी : अच्छा अब पीकर देखो शराब, पी नहीं सकते उलट हो जायेगी उलटी हो जायेगी। धर्म जब जागृत हो गया अन्दर तो वह फेंक देगा आपकी शराब को। आप पी नहीं सकते। एक साहब ने कोशिश की। उनके तो खून निकल आया। उन्होंने कहा, भगवान बचाए रखे मैं तो जाऊँ। और उनको इतनी बदबू आने लग गयी जो कभी उनको शराब में बदबू नहीं आती थी, वो उनको बदबू आने लग गयी। कहने लगे : अजीब से सड़े से बुत जैसी उसमें बदबू आ रही थी। अब मैंने कहा इसे सात साल से चढ़ाते रहे पेट में, उसकी नहीं आयी ? कहने लगे पता नहीं मेरी जीभ मरी हुई थी। धर्म इस तरह इतने ज़ोर से आपके अन्दर जागृत हो जाता है कि फिर पाप और पुण्य जो है जैसे नीर व क्षीर विवेक हो जाता है उस तरह से अलग-अलग हो जाता है और आप जान जाते हैं कि ये मेरे लिए रास नहीं आएगा, यह मेरे माफ़िक़ नहीं आने वाला। ये मुझे suit ही नहीं कर सकता, इसकी allergy है मुझको। आप allergic ही हो जाते हैं। और इसलिये पहले सहजयोग में बताया ही नहीं जाता है कि तुम ये नहीं करो, वो नहीं करो। वह अपने-आप आप करने लग जाते हैं। क्योंकि आपके अन्दर आपका जो "परम-गुरु आत्मा है", शिव स्वरूप आत्मा जागृत हो करके वही आपको समझा देता है कि भई देखो ये चीज़ चलने वाली नहीं है अब हम से। क्योंकि आप अब आत्मा हो गये इसलिए अब आत्मा बोलेगा। और बाक़ी जो चीज है गौण हो जाती है, और मुख्य हो जाता है "आत्मा"।

इस प्रकार हमारी आज तक की संसार की गति-विधियाँ रहीं और मनुष्य इस प्रकार बढ़ता रहा। लेकिन आज समाँ दूसरा है। जैसे कि पहले एक बीज से अंकुर निकला, अंकुर निकलने के बाद पेड़ का तना बना, उसमें से पत्तियाँ, शाखाएँ सब निकलीं लेकिन ये 'सब' जिस लिए हुआ है, वो है इसका 'फल'। तो आज मैं देख रही हूँ मेरे आगे अनेक फूल बैठे हुए हैं। इन फूलों का फल बनाने का काम यही मैं करती हूँ और कुछ नहीं। और आप सब वह फल हो सकते हैं। तो 'सारे' ही धर्मों ने इसको पुष्ट किया है। सारे ही जितने प्रवर्तक हो गये सब ने इसको पुष्ट किया है। जितने दुनिया के महात्मा हो गये उन्होंने इसे पुष्ट किया है। जितने सन्त, साधु, द्रष्टा हो गये उन्होंने इसे सञ्जोया है और पनपा है। और 'जितने भी' इस संसार के अवतरण हुए हैं, सबने इसमें कार्य किया है। ये कोई एक का कार्य नहीं कि 'हम साहब फ़लाँ के पुजारी हैं, हम इनको मानते, उनको नहीं मानते।' ये तो ऐसे हो गया : मैं इस आँख को मानता हूँ, इस आँख को नहीं मानता। ये 'सारे के सारे' आपके शरीर के अन्दर बसे हुए हैं, और इन 'सबका' समग्र integrated जो प्रयत्न है, उस प्रयत्न का फल आपका आत्म-साक्षात्कार है। और वह समाँ आज

आ गया है कि इन सब के फलस्वरूप जो इच्छाएँ थीं इन सब महानुभावों की, वो पूर्ति हों। वह आज का समय है। और यह काम पता नहीं क्यों, मुझे मिला ! हालाँकि ये काम और कोई कर भी नहीं सकता। ये तो माँ ही कर सकती है। जब पहाड़ों जैसी कुण्डलिनियाँ उठानी पड़ती हैं तब पता चलता है, पसीने छूट जाते हैं। और इसलिए एक माँ पर ये काम आ बैठा है। मैं कोई आपकी गुरु-शुरु नहीं हूँ। न ही मुझे आप से कुछ लेना-देना है। सिर्फ़ जो मेरा काम है वह मुझे करना है। और आप अगर चाहें तो मैं कर सकती हूँ, पर आप न चाहें तो जबरदस्ती यह काम हो नहीं सकता। अगर आप की इच्छा हो तभी हो सकता है। अगर आपके अन्दर यह शुद्ध इच्छा नहीं हो और यह इच्छा जागृत नहीं हो तो मैं इसे नहीं कर सकती। अब बहुत-से लोग तो मुझ से मारा-मारी करने पर आ जाते हैं। लड़ाई करते हैं, झगड़ा करते हैं। 'ऐसे कैसे हो सकता है। और कुण्डलिनी ऐसे कैसे जागृत हो सकती है।' पर होती है तो फिर क्या करें। अगर होती है तो उसे मैं क्या करूँ। 'ऐसे कैसे ?' मैंने कहा, 'होती जरूर है। इसमें कोई शङ्का नहीं।' अब अगर इस तरह से आप मुझसे लड़ाई करने पर आमादा रहें कि कैसे होती है, तो मैं आप से क्या कहूँ ? होती है, और जरूर होनी चाहिए। और ये कार्य करने का समय, ये आज की शुभ बेला आयी हुई है। इसे कृतयुग कहते हैं। और इस कृतयुग में कार्य होगा, जिसमें 'जितने' भी बड़े-बड़े अवतार, महानुभाव द्रष्टा और मुनि, तीर्थंकर आदि जितने लोग हो गये, उन सबके आपको आशीर्वाद हैं। और उनके आशीर्वाद-स्वरूप आप यह समग्र integrated आशीर्वाद प्राप्त करते है। इसमें कैसे होता है, क्या होता है, ये आप स्वयं जानें और देखें, बजाए इसके कि अपनी बुद्धि के दायरे में रहें। क्योंकि अभी तक धर्म भी एक बुद्धि के ही दायरे में है, हर एक चीज़ बुद्धि के दायरे में हैं। मैं देखती हूँ इतनी बड़ी-बड़ी किताबें लोगों ने लिख मारीं। लेकिन वह कुछ समझते ही नहीं। फ़ायदा क्या हुआ ? 'पसाय-दान'—अभी कोई बता रहा था, उस पर इतनी बड़ी किताब किसी ने लिखी है। मैंने कहा उनको तो खोपड़ी खराब हो गयी। वो सारा सहजयोग उन्हों ने लिखा है, और क्या लिखा है ? सारे सहजयोग का वर्णन है और उसी की उन्होंने भविष्यवाणी की है। अगर आप ठीक से पढ़ें तो आपकी समझ में आ जाएगा कि सारा सहजयोग बता गये हैं। अब उस पर क्या आप इतनी बड़ी-बड़ी किताबें लिख रहे हैं ? उसमें लिखने का 'क्या' है ? वह तो पाने का होता है। और जो यथार्थ है, वह पाया जाता है, उसके बारे में बातचीत नहीं की जाती।

बहरहाल मुझे आशा है आज आप में बहुत-से लोग यहाँ पार हुए बैठे हैं। आप ही जैसे दिखाई देते हैं, आप ही जैसे। हो सकता है शुरू में बहुत-से सहज-योगी उस दशा में न पाए जाएँ जैसे कि बड़े योगी-जन होते हैं। लेकिन उनकी जागृति हो गयी है। और वह योग की तरफ़ वर्द्धमान हो रहे हैं। वो बढ़ रहे हैं। उनको देखकर के आप इसमें से पलायन मत करिये। बहुत-से लोग होते हैं कि 'साहब, मैं गया था, वहाँ एक साहब थे, वह कुछ ऐसा-वैसा कर रहे थे।' तो इसका मतलब है आपने उनको देखा और आप अपने में पलायन कर गये। माने आप चाहते कुछ हैं नहीं। आप 'अपने' बारे में सोचिये। जो यहाँ लोग आए हैं, उनमें से हो सकता है, कुछ लोग ऐसे हों कि उनकी जागृत भी न हो। पर बराबर आप अगर negative (विकार-युक्त) आदमी होंगे तो उसी के पास जाके धमकेंगे और उसी की वजह से आप भाग भी खड़े होंगे।

इसलिए, यह जानना चाहिए कि सहजयोग को प्राप्त करने के लिए सिर्फ़ आप में 'शुद्ध-इच्छा' होनी चाहिए। और कोई चीज़ की ज़रूरत नहीं। अगर आपके अन्दर शुद्ध इच्छा हो, जो स्वयं साक्षात् कुण्डलिनी है, वही शुद्ध इच्छा है। और जब यह शुद्ध इच्छा की शक्ति जागृत हो जाती है, तभी

कुण्डलिनी का जागरण होता है। यह शुद्ध इच्छा आप सबके अन्दर है। लेकिन अभी जागृत नहीं है। इसको जागृत करना और सहस्रार में इसका छेदन कराना, यही कार्य करना आज का सहजयोग।

पर इसमें 'बहुत' कुछ आ जाता है। क्योंकि जब आप एक फल को देखते हैं, तो उसमें सभी कुछ दिया हुआ, इस पेड़ का, सारा कुछ उसके अन्दर निहित होता है। अगर आप उसका एक बीज उठा कर देखें तो उसके अन्दर उतने सारे पेड़ बने हुए रहते हैं जो उसमें से निकलने वाले हैं। इस प्रकार सहजयोग अत्यन्त गहन और प्रगाढ़ है, किन्तु 'अत्यन्त' 'विशाल' है। इसमें 'सभी' जितना कुछ परमात्मा का कार्य हुआ है संसार में, वह सारा का सारा निहित है।

आशा है आप लोग अपने आत्म-साक्षात्कार को प्राप्त करेंगे। एक और आज के दिन की विशेष बात यह है कि सहस्रार को खोलने का कार्य, जो कि महत्त्वपूर्ण था, मेरे लिए वही मुख्य कार्य था। मैंने अनेक लोगों की कुण्डलिनियों को सूक्ष्म रूप से जाना था। और यह सोचती थी कि मनुष्य के क्या क्या दोष हैं और उन दोषों का अगर मैं सामूहिक तरह से इस कार्य को करना चाहती हूँ—जोकि समय है सामूहिक का—तो किस प्रकार सारे जो कुछ भी इनके मेलमिलाप permutation-combinations हैं, उसको किस तरह से छेड़ा जाए कि एक ही झटके में सब लोग पार हो जाएँ। और इस पर मैंने बहुत गहन विचार किया था। और उसमें जो कुछ मुझे समझ में आया उस हिसाब से ५ मई के दिन सहस्रार खोला गया—उस हिसाब से। और आज की रात, पूरी रात, मैं समुद्र के किनारे अकेले जागी थी और जागते वक्त पूरे समय मैं सोच रही थी कि किस तरह से इस सहस्रार का आवरण दूर होगा। और जैसे ही मौक़ा मिला, सवेरे के समय ये सहस्रार खोला गया। आज का दिन इसलिए भी बहुत शुभ है।

और दूसरी आज की और भी बड़ी शुभ बात है कि गौरी जी का सप्तमी का दिन है, और उस वक्त भी ऐसा ही था। क्योंकि गौरी जो है, वह कुण्डलिनी है। और वही जो कन्या मानी जाती है, virgin (कुमारी) है। वह इसलिए virgin है कि अभी उसका योग शिव से नहीं हुआ है। इस लिए वह virgin है। और इस शुभ मुहूर्त पर, जब कि वह गौरी स्थान पर है, यह कार्य घटित हुआ। और जब यह कार्य घटित हुआ, उसके बाद मैंने सहजयोग का कार्य करना शुरू किया।

और आप जानते हैं आज 'हजारों' में लोग पार हो रहे हैं। आज अगर मैं किसी देहात में बोलती होती तो इससे सात गुना लोग बैठे होते। और बैठते ही हैं। शहरों में आना तो time (समय) बर्बाद करना है। क्योंकि लोग वैसे ही पार नहीं होते। होने के बाद मेरा सर चाट जाते हैं। और वह भी मेरा, परेशान कर देते हैं और कोई जमते नहीं। अगर आप सौ आदमियों को पार कराइये, उसमें पचास आदमी तो सर चाटने के लिए आते हैं और पचास आदमी जो बच जाते हैं, उसमें से पच्चीस फ़ीसदी आदमी ऐसे होते हैं कि जो गहनता से सहजयोग को लेते हैं, क्योंकि वह level (स्तर) नहीं है लोगों के, वह शक्ति नहीं है उनके अन्दर, वह सूझ-बूझ नहीं है। और अगर गाँव के लोग जो होते हैं, जो बहुत सीधे-सरल परमात्मा के बहुत नज़दीक पृथ्वी माता से नजदीक रहते हैं उनकी जो शक्ति है वह इतनी 'गहन' है और इस क़दर वह आंकलन करते हैं कि आश्चर्य होता है। और 'एक रात' में ही उनमें इतना बदल आ जाता है। और ऐसा : 'जैसे कि 'प्रकाश' फैल जाए, एकदम 'आग' जैसे लग जाए।' इस तरह से 'कोई' भी village (गाँव) में मैं जाती हूँ तो छः सात हज़ार से आदमी कम नहीं आते।

और अपने यहाँ बम्बई में आज कम-से-कम

इतने वर्षों से कार्य कर रहे हैं तो भी मैं कहती हूँ बहुत लोग आए हैं। नहीं तो मैंने यहाँ तो एक से शुरू किया था। तो उस हिसाब से काफ़ी लोग आए हैं।

पर आपको जान लेना चाहिए कि सहजयोग जैसे मराठी में कहा गया है कि 'येरा गबाळ्याचे काम नोहे'। वीरों का काम है। जिनमें ये वीरश्री हो, वही सहजयोग में आ सकते हैं। नहीं तो आधे लोग आते हैं कि 'माँ, हमारी बीमारी ठीक करदो', या उसके बाद आते हैं मेरा सर चाटने के लिए। उसके लिए सहजयोग नहीं है। सहजयोग है अपनी आत्मा को पाने के लिए। उसे आप पहले प्राप्त करें, आपकी तन्दुरुस्ती भी ठीक हो जाएगी। इतना ही नहीं आपकी तन्दुरुस्ती ठीक हो जाएगी, पर आप दूसरों की भी तन्दुरुस्ती ठीक कर सकते हैं। सबसे बड़ी तो बात यह है कि एक दीप जब जल जाता है तो अनेक दीपों को जला सकता है। इसी प्रकार आप भी अनेकों को जागृत कर सकते हैं।

सहजयोग एक 'जीवन्त' प्रणाली है। यह मरी हुई प्रणाली नहीं जिसके लिए आप अपना मेम्बर-शिप बना लें या पाँच रुपया दे दें, चार आना, मेम्बर हो जाएँ, ऐसा नहीं है। 'आपको' कुछ होना पड़ता है। आपको बदलना पड़ता है। 'आपमें' कुछ फ़र्क़ आना पड़ता है। और वह आने के बाद आप को स्थायी होना पड़ता है और वृक्ष की तरह खड़ा होना पड़ता है। ऐसे जो लोग होंगे वही सहजयोग के योग्य होते हैं। आजकल बातें तो लोग बहुत करते हैं कि समाज में ये सुधारणा होनी चाहिए और यह अपने देश में होना चाहिए। लेकिन सहज योग में जब आप आएँगे नहीं तब तक आपके देश में न कोई सुधारणा हो सकती है, न आप किसी की मदद कर सकते हैं, जैसे मैंने आपको समझाया।

सहजयोग एक प्रेम की शक्ति है, परमात्मा के प्रेम की शक्ति। और 'वह' प्रेम की शक्ति आपके अन्दर बहना शुरू हो जाती है, जो 'सर्वव्यापी' शक्ति है। उस शक्ति को किस तरह से चलाना है, अपने अन्दर स्थायी कैसे करना है, उसका उपयोग कैसे करना है, ये सारी बातें आपको सीख लेनी चाहिए। और इस सीखने में आपको कोई समय नहीं लगता। अगर आपके अन्दर सद-इच्छा है तो सब चीज़ हो सकती है। अर्थात् आप जानते हैं कि इसके लिए पैसा-वैसा कुछ नहीं दे सकते। हमारा कोई organisation (संस्था) नहीं है। हमारे यहाँ कोई membership (सदस्यता) नहीं है। कुछ भी नहीं है। यह सबको पाने की चीज़ है। और 'सब' जब पा लें, आप अगर सभी पा लें, तो मेरे ख़याल से आधे बम्बई का तो उद्धार हो ही गया। आने के बाद सिर्फ़ जमना चाहिए। इसकी बड़ी आवश्यकता है।

बहुत गहन है, और है भी एक लीलामय। बड़ा ही मजेदार है। बहुत ही लीलामय चीज़ है। अगर आप इसमें आ जाएँ, इतना माधुर्य इसके अन्दर है। कृष्ण ने सारा माधुर्य इसमें भरा हुआ है। और 'सब' तरह की इतनी 'सुन्दर' इसकी रचना है कि उसको जानने पर मनुष्य सोचता है कि "क्या मैं 'इतना' सुन्दर हूँ अन्दर से? क्या मैं 'इतना' विनोदी हूँ? क्या मैं 'इतना' धार्मिक हूँ?" धर्म और विनोद तो हम समझ भी नहीं सकते। लेकिन धर्म जहाँ हमें हँसाये और आनन्द विभोर कर दे, वही धर्म असली है।

परमात्मा आप सबको आत्मसाक्षात्कार दें। और सुबुद्धि दें कि इसमें आप जमें और आगे बढ़ें। बहुत-से लोग इसमें बढ़ गये हैं, बम्बई शहर में। 'बहुत' लोग हैं। ज्यादा से ज्यादा लोग अब हो गये हैं, मेरा कहना है। यहाँ सब तो आए नहीं हैं। जो भी हैं आए हुए हैं। लेकिन और इसके अलावा बहुत से लोग हैं जो यह कार्य अनेक केन्द्रों में कर रहे हैं, मुफ़्त में कर रहे हैं। आप उनसे मिलिए और अपनी प्रगति करिये।

परमात्मा आप सबको आशीर्वाद दे!

(कवर पृष्ठ २ का शेष)

धिक vibrations का आनन्द पायेंगे और उल्हास की वृद्धि होगी। उनका अहं (ego) एवं प्रति अहं (super ego) कम से कम होकर विलुप्त हो जायेंगे। बहुधा वन्दनीय माताजी आस्ट्रेलिया का उदाहरण प्रस्तुत करती रहती हैं कि वहाँ के निवासियों में मान्यता (recognisation) की मात्रा में विपुलता है। यह अबोधता (मासूमियत) (innocence) से आती है, जो वस्तुतः यथार्थ है। अबोधता जब सत्य के सम्पर्क में आकर मिलती है तो ज्ञान का उदय होता है। अबोधता सत्य सङ्गम से ज्ञान बन जाती है। यदि अकृत्रिम हानि की मात्रा अत्यधिक है तो मान्यता अपनी गति से गतिमान होकर हानि की आपूर्ति में सहायता करती है।

माताजी का कथन है कि आस्ट्रेलिया में मान्यता इतनी दृढ़ है कि आत्मसमर्पण की द्वितीय सोपान शीघ्रता से सहज ही में प्राप्त हो जाती है। जब यह घटित हो जाती है तो वास्तविक एकता में विलम्ब नहीं लगता। परन्तु इस समर्पण एकता में एक खतरा है कि ये विकास एवं सामूहिकता एक आवश्यक अङ्ग बन जाते हैं। माताजी ने बार-बार आग्रह किया है और चेतावनी भी दी है कि **माताजी से प्रेम करना ही पर्याप्त नहीं है वरन् सामूहिक रूप से परस्पर स्नेह सिक्त होने से ही आप आदि शक्ति माताजी को प्रसन्न कर सकते हैं।** बहुत सारे सहजयोगियों ने माताजी को आत्मसमर्पण किया है (वे दावा करते हैं कि हमने ऐसा किया है) परन्तु वे परस्पर स्नेहशील दृष्टिगोचर नहीं हो रहे हैं तथा अपने सहजयोगियों की देखभाल की सुचारु रूप से नहीं करते हैं तथा कभी-कभी असामूहिकता (एकाङ्गी) भी ग्रहण कर लेते हैं। माताजी इससे अधिक और कुछ न कह सकेंगी क्योंकि यह एक पाठ्यक्रम है जिसको प्रत्येक व्यक्ति द्वारा स्वयं ही हृदयङ्गम करना है। पाठ याद हो जाने के पश्चात् वह अपने व्यक्तित्व को भूल जाता है और अन्तिम एकयता का सोपान आरम्भ हो जाती है।

माताजी ईश्वर की सामूहिकता के रूप में प्रतिष्ठित हैं। अतः उन्हें जानने का मार्ग केवल सामूहिकता को आत्म समर्पण ही है और यही एक ऐसा बिन्दु है जहाँ हमें अपने प्रति ईमानदार होना है। मैं एक बार फिर पुनरावृत्ति करता हूँ कि माता जी इस तथ्य को बारम्बार उजागर नहीं करेंगी। आपको अपना विकास होता हुआ सा प्रतीत होगा परन्तु वास्तव में आपका ह्रास हो रहा है। यह माया की कार्य प्रणाली है जिससे आप शिक्षा प्राप्त करने हेतु धकेले जाते हैं। अतः आप से उनका अनुरोध है कि आप गम्भीरता से ईमानदारी से अपने निर्धारित मार्ग का अनुसरण करें जिसमें आपकी सामूहिकता का विकास आत्मसमर्पण के साहचर्य में सम्पन्न हो। जैसा मैंने कहा था यह वैसा नहीं है—नहीं है—यह आत्म समर्पण नहीं है वास्तव में मानसिक प्रक्रिया है। यदि ऐसा ही है तो आप निःसंदेह अपने भाई-बहनों के प्रति और अधिक स्नेह एवं प्रसन्नता में वृद्धि का अनुभव करेंगे। अतः माताजी के प्रति स्नेहिक होना स्वतः सिद्ध है।

प्रत्येक सहजयोगी को यू.एस.ए. में ही नहीं वरन विश्व भर में सहज योग के प्रचार प्रसार की मंगल कामना करनी है। आपके चित्त में शुद्धता समग्र एकाग्रता का होना आवश्यक है। इसमें पवित्रता तथा स्थिरता का पुट भी देना है क्या सहजयोगी नित्य प्रति अभ्यास करके अपने मानसिक उद्वेगों को न्यूनातिन्यून करने का प्रयत्न करते हैं। माताजी की कृपा (grace) का पूर्ण आनन्द उठाइये।

स्नेहसिक्त !
—वारेन
11-9-81

Registered with the Registrar of Newspapers under Regn. No. 36999/81

सहजयोगी की चाह

हे माँ ! फूल बने हम जीवन के,
महकेंगे महकायेंगे ।
प्रेम - पुष्प मालाओं से,
तेरे पदकमल सजायेंगे ।
गायेंगे, हम गायेंगे,
गीत प्रेम के गायेंगे ॥१॥

ज्योति से ज्योति जलायेंगे,
प्रेम-प्रकाश फैलायेंगे ।
शीश झुका कर तेरे चरणों पर,
हम धन्य धन्य हो जायेंगे ।
गायेंगे, हम गायेंगे,
गीत प्रेम के गायेंगे ॥२॥

सहजयोग अपनायेंगे,
हम जीवन सहज बनायेंगे ।
अर्थ जीवन का पायेंगे,
हम जीवन सफल बनायेंगे ।
गायेंगे, हम गायेंगे,
गीत प्रेम के गायेंगे ॥३॥

सहज प्रेम की क्रान्ति,
जन मानस में लायेंगे ।
लाल बनेंगे हम तेरे,
निर्मल प्रेम कहलायेंगे ।
गायेंगे हम गायेंगे,
गीत प्रेम के गायेंगे ॥४॥

पवन और अम्बर में,
सुमन सुगन्ध फैलायेंगे ।
नक्षत्र तारों तक हम,
तेरा सन्देश सुनायेंगे ।
गायेंगे, हम गायेंगे,
गीत प्रेम के गायेंगे ॥५॥

क्यों खोजें जल, थल, नभ में,
क्यों खोजें त्रिभुवन में ।
हीरे, मोती, तारे,
चमकते प्रेमांगन में ।
गायेंगे, हम गायेंगे,
गीत प्रेम के गायेंगे ॥६॥

तेरी इच्छा बन कर,
तेरे ही बन जायें ।
होकर 'परम' के,
परम प्रेम पायें ।
गायेंगे, हम गायेंगे,
गीत प्रेम के गायेंगे ॥६॥

❀ जय माता जी ❀

—सी. एल. पटेल

सन् १९८४ में परम पूज्य माताजी का दिल्ली में कार्य-क्रम

११-३-८४	१२ बजे अपराह्न	ग्राम तुगाना, जिला मेरठ
१२-३-८४ से १३-३-८४ तथा		
१५-३-८४ से १७-३-८४	६ बजे संध्या	मावलंकर आडिटोरियम, रफी मार्ग
एवं २०-३-८४		
१४-३-८४	६-३० बजे संध्या	सनातन धर्म मन्दिर, शंकर रोड, न्यू राजेन्द्र नगर
१८-३-८४ व १९-३-८४		सेमीनार, गढ़गङ्गा, गढ़मुक्तेश्वर

Edited & Published by Sh. S. C. Rai, 43, Bunglow Road, Delhi-110007 and Printed at Ratnadeep Press, Darya Ganj, New Delhi-110002.
[One Issue Rs. 5.00, Annual Subscription Rs. 20.00 Foreign [By Airmail £ 4 $ 8]